वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

समकालीन समाज की विडंबनाएँ और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : एक पुनर्व्याख्यात्मक अध्ययन

श्रद्धा त्रिपाठी
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

प्रस्तावना – समकालीन समाज अनेक प्रकार की विडंबनाओं से घिरा हुआ है। एक ओर जहाँ विज्ञान व तकनीक और आर्थिक क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई है, वहीं दूसरी ओर मानवीय मूल्यों का ह्रास, नैतिकता का संकट और सामाजिक असन्तुलन भी उसी तीव्रता से बढ़ा है। आधुनिक मनुष्य वाह्य रूप से जितना सशक्त और अधिक संसाधनयुक्त दिखाई देते है आन्तरिक रूप से उतना ही विखण्डित और असन्तुष्ट प्रतीत होता है। यही द्वंद्वात्मक स्थिति को साहित्य ने सदैव अभिव्यक्ति दी है।

समकालीनता का तात्पर्य केवल वर्तमान समय में जीना नहीं है, बल्कि उस समय की नैतिकता, समस्याओं और जीवन दृष्टि को समझना भी है। इसी सन्दर्भ में बोधकथा जैसी विधा का महत्त्व बढ़ जाता है। हिन्दी साहित्य में बोध-कथाओं की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है, जिसमें पंचतंत्र और हितोपदेश जैसे ग्रंथ प्रमुख हैं। बोधकथाएँ अपने संक्षिप्त रूप में जीवन के गहरे सत्य प्रस्तुत करती हैं। बोधकथाओं की परम्परा को आधुनिक सन्दर्भों में पुनर्परिभाषित करने वाले कथाकारों में शिव नारायण सिंह का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनकी बोध कथाएँ केवल नैतिक शिक्षा तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे समकालीन समाज की जटिलताओं, विडंबनाओं और विसंगतियों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं।

लघु आकार के बावजूद ये कथाएँ समकालीन समाज की जटिलताओं और नैतिक पतन पर उसी दक्षता के साथ प्रहार करती हैं। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ परम्परागत बोधकथाओं के प्राचीन शिल्प को समकालीन मुद्दों में ढालती हैं। इनकी बोधकथाएँ - 'काँटे और फूल', 'मानवीय सत्ता', 'स्वप्न और यथार्थ' आदि आज के परिप्रेक्ष्य में युवाओं के मानसिक द्वंद्वों और नैतिक दिशा को रेखांकित करती हैं।

ये कथाएँ संघर्ष की अनिवार्यता, दृढ़निश्चयता और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाने का संदेश देती हैं जो युवाओं के लिए अत्यन्त प्रासंगिक है। 'काँटे और फूल' संघर्ष के बिना सफलता की असंभावना को दर्शाता है, जबकि 'मानवीय सत्ता' तकनीकी युग में भी मानवीय संवेदनाओं को बनाए रखने पर जोर देती है। 'स्वप्न और यथार्थ' सोशल मीडिया के दौर में कल्पना और यथार्थ के बीच सन्तुलन स्थापित करने का संदेश देती है। इस प्रकार ये वर्तमान में 'कैरियर' के पीछे दौड़ लगाते हुए युवाओं के लिए एक नैतिक और मानसिक मार्गदर्शक की भूमिका निभाती हैं।

शिव नारायण सिंह की कथाएँ अक्सर यह संदेश देती हैं कि सच्चा वह नहीं है जो दिखता है, अपितु वह है जो विडंबनाओं के पर्दे के पीछे छिपा है। समानता का वह वर्ग जो आदर्शों की बातें तो करता है, किन्तु आचरण में अवसरवादी है- उस मुखौटे को ये कथाएँ बड़ी निर्ममता के साथ उतारती दिखाई पड़ती है। आज के दौर में जब फेकन्यूज और सूचनाओं का अम्बार है, शिव नारायण सिंह की कथाएँ हमें विवेक की ओर वापस ले जाती हैं। यही उनकी पुर्नव्याख्या की सार्थकता है।

साहित्य की वास्तविक शक्ति उसकी बहुस्तरीयता और पुनर्पाठ की संभावनाओं में निहित होती है। कोई भी रचना केवल अपने समय तक सीमित नहीं रहती, बल्कि विभिन्न युगों में एक नए अर्थ ग्रहण करती है। यही कारण है कि पुर्नव्याख्या साहित्यिक अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण बन जाती है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे पारंपरिक बोधकथा की संरचना को अपनाते हुए भी आधुनिक जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित करती हैं।

बीज- शब्द– मानवीय मूल्य, नैतिक संकट,

समकालीनता, पुर्नव्याख्या, सामाजिक विडंबना, संवेदनशीलता, मानवीय सत्ता, मानवीय संवेदना, यथार्थवादिता, निर्ममता।

सारांश– समकालीन समाज की विसंगतियों और विडंबनाओं के विश्लेषण में सबसे पहली विडंबना आर्थिक असमानता के रूप में सामने आती है। दूसरी महत्त्वपूर्ण विडंबना नैतिक मूल्यों का पतन है। सामाजिक क्षेत्रों में विचार, समुदायी विकास, वैश्विक स्तर पर, राजनीतिक और प्रशासनिक स्तर पर व्याप्त विडंबनाएँ स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती हैं। सांस्कृतिक स्तर पर परम्परा और आधुनिकता के मध्य संघर्ष भी एक महत्त्वपूर्ण विडंबना है।

इन सभी विडंबनाओं के बीच साहित्य की भूमिका अत्यन्त प्रासंगिक हो जाती है। साहित्य न केवल समाज का प्रतिबिम्ब होता है, बल्कि वह समाज की समस्याओं का विश्लेषण और समाधान भी प्रस्तुत करता है। विशेष रूप से बोधकथा जैसी विधा जो सरल और संक्षिप्त रूप में सत्य का उद्घाटन करती है, आज के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ समकालीन समाज की विसंगतियों को उजागर करते हुए एक नई व्याख्यात्मक दृष्टि प्रदान करती हैं। प्रस्तुत शोधलेख में समकालीन समाज की विडंबनाओं का विश्लेषण करते हुए शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का पुनर्पाठ करने का प्रयास किया गया है। यह लेख स्पष्ट करता है कि उनकी कथाएँ केवल नैतिक शिक्षा नहीं, बल्कि सामाजिक- चेतना का सशक्त माध्यम हैं।

लेख का औचित्य– इस शोधलेख के शीर्षक का चयन इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि बोधकथा परम्परा पर तो बहुत कार्य हुआ है, परन्तु आधुनिक पुर्नव्याख्या पर सीमित अध्ययन हैं। विशेष रूप से शिव नारायण सिंह जैसे कथाकार पर अपेक्षाकृत कम ही शोध हुआ है।

उद्देश्य–

- समकालीन समाज की प्रमुख विडंबनाओं का विश्लेषण करना।
- बोधकथा परम्परा के स्वरूप और विकास का अध्ययन करना।
- शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का आलोचनात्मक विवेचन करना।
- उनकी कथाओं का पुर्नव्याख्यात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना।
- सामाजिक और नैतिक दृष्टि से उनके योगदान को स्थापित करना।

समकालीन समाज की विडंबनाएँ– समकालीन समाज विरोधाभासों का समाज है। यहाँ विकास और विनाश, समृद्धि और गरीबी, स्वतंत्रता और बंधन सभी एक साथ विद्यमान हैं।

आर्थिक असमानता– समकालीन समाज की सबसे प्रमुख विडंबना आर्थिक स्तर में परिलक्षित होती है। और आज वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप वैश्विक अर्थव्यवस्था अत्यन्त तीव्र गति से विकसित हुई है किन्तु इसके साथ ही आय और सम्पत्ति का असमान वितरण भी उसी द्रुत गति से बढ़ा है। एक ओर समाज का एक वर्ग अत्यन्त समृद्ध होता जा रहा है, वहीं दूसरी ओर एक बड़ा तबका आज भी गरीबी, बेरोजगारी और अभाव का जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। यह वर्ग मूलभूत सुविधाओं के लिए संघर्षरत है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ समकालीन उदारीकरण के दौर में उपभोक्तावाद, भौतिकवादी प्रतिस्पर्धा और स्वार्थकेंद्रित जीवनशैली जैसी विडंबनाओं के बीच नैतिक सन्तुलन का कार्य करती हैं। ये कथाएँ मानवीय मूल्यों, कर्मों और मानवीय सत्ता को प्राथमिकता देकर बाजारवाद के पाखण्ड के मुकाबले मानसिक संबल प्रदान करती हैं। अपनी आवश्यकता को साधकर संतोषभाव में ही मनुष्य को सुख की प्राप्ति हो सकती है। विद्यार्थियों से... खण्ड छः की बोधकथा 'इच्छापूर्ति' में वे कहते भी हैं, "अगर हम यह तय कर लेते हैं कि हमें कितने की जरूरत है और जो हमारे पास है उसकी कितनो को जरूरत है तो निश्चित जानिए हमने अपनी दिशा पा ली, हमने अपना लक्ष्य पा लिया, हमने अपने मन को जीत लिया और जिसने मन को जीत लिया उसने सारे जगत को जीत लिया।"1

नैतिक मूल्यों का पतन– दूसरी महत्त्वपूर्ण विडंबना नैतिक मूल्यों का पतन है। आधुनिक समाज में सफलता का मापदण्ड नैतिकता नहीं, बल्कि दौलत और ख्याति बन गया है। ईमानदारी, सामाजिकता और सद्गुणों जैसे जीवन मूल्य धीरे-धीरे हाशिए पर चले गए हैं। इंसान अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए

अकल्पनीय स्तर तक गिरने के लिए तैयार है। परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार और अनैतिकता समाज के सामान्य व्यवहार का हिस्सा होता चला जा रहा है और उसकी आंतरिक मानवीय सत्ता संकुचित होती गई है। शिव नारायण सिंह की बोध कथाएँ इसी संकुचन को रोकने का एक सार्थक प्रयास हैं। वे विद्यार्थियों को यंत्र बनने के विरूद्ध सचेत करते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्य की इसी मानवीय पक्ष को रेखांकित करते हुए अपनी कहानी कृति 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में लिखते हैं, "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाङ्मय मनुष्य की दुर्गति, हीनता, परमुखापेक्षिता से बचा सके... उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।"2

द्विवेदी जी का यह मापदण्ड शिव नारायण सिंह की कथाओं पर सटीक बैठता है। जब वे 'मानवीय सत्ता' कथा में शरीर के अंगों के यांत्रिकीकरण की बात करते हैं तो उनका मूल उद्देश्य श्रोता एवं पाठक को 'परमुखापेक्षिता' से बचाना है।

'मूल्यों के निर्माण कलश' में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय लिखते हैं, " श्री सिंह अपने विद्यालय में पुस्तकीय ज्ञान के साथ- साथ नीति विषयक एवं बोधकथाओं के माध्यम से बच्चों को सुसंस्कृत, आचारवान, विनम्र, कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदारी, साहस, सहजता, स्वच्छता, सहृदयता, स्वार्थहीनता धर्म, शान्ति नियंत्रण अनुशासन, निष्ठावान, अनुशासित, व्यावहारिकता का ज्ञान दिलाने का सत्प्रयास करते रहते हैं, क्योंकि केवल पुस्तकीय ज्ञान से तो शिक्षा के उद्देश्य को पूरा नहीं किया जा सकता।" वे आगे लिखते हैं, " देश और समाज के लिए नैतिकता एक प्रश्नचिन्ह बन हुआ है, क्योंकि हमारे देश का अतीत रत्नों से भी अधिक जाज्वल्यमान रहा है। इस सोने की चिड़िया कहा जाता था पर बड़े दुःख की बात है कि ऐसा विश्वशिरोमणि' भारत देश आज पतन की ओर जा रहा है। समाज में सुधार करना बड़ा कठिन कार्य है। पथभ्रष्ट व्यक्ति को नैतिक स्तर पर ले आना एक दुष्कर कार्य है। इस दुष्कर कार्य को साधने हेतु एवं समाज और देश के उत्कर्ष के लिए श्री सिंह ने अकेले ही अपने जीवन को सत्य का प्रयोग बना दिया।"3

आज के उत्तर- आधुनिक समाज में जहाँ 'सूचनाओं' की बाढ़-सी है वहाँ लघु कथाओं का महत्त्व और भी बढ़ गया है। डॉ. नामवर सिंह ने इस विडंबना को पहचानते हुए आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियों में स्पष्ट किया है, "आज के दौर में बड़ी-बड़ी घोषणाओं के बजाय छोटी- छोटी अर्थपूर्ण सच्चाइयाँ अधिक प्रासंगिक है। आधुनिकता का अर्थ केवल तकनीक नहीं बल्कि उस तकनीक के बीच मनुष्य का बचा रहना है।"4

शिव नारायण सिंह की कथाएँ वे छोटी-छोटी सच्चाइयाँ ही हैं जो स्वप्न और यर्थाथ के बीच के पाखण्ड को उद्घाटित करती हैं। वे कोई बड़ा राजनीतिक घोषणा पत्र नहीं जारी करतीं, बल्कि विद्यार्थियों के हृदय में 'विवेक' का एक लघु दीप प्रज्ज्वलित करती हैं। यह 'विवेक' ही वह शक्ति है जो उसे बाजारवाद के चकाचौंध में भी अपनी अस्मिता बनाए रखने में मदद करती हैं। डॉ. नगेंद्र, विचारव्यक्त करते हैं – "बोध कथाओं का सौंदर्य उनके उपदेश में नहीं बल्कि उस कौतूहल और सत्य के उद्घाटन में है जो श्रोता एवं पाठक को चमत्कृत कर दे।"5

सामाजिक सम्बन्धों के विघटन– आजकल संयुक्त परिवारों का विखण्डन जिस तेजी के साथ हो रहा है, उसने एकल परिवार के वृद्धि से प्रवाह को तीव्र कर दिया है। आज के इस एकल परिवार के दौर में नगरों, महानगरों में 'दादा-दादी, नाना-नानी' इत्यादि अनुभवी अभिभावकों से दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, नाना-नानी आदि के गोद में संस्कारयुक्त कथाएँ सुनते हुए बच्चे बड़े होते थे, उन्हें सामूहिकता का महत्त्व पता चलता था। बच्चों को बचपन से ही जिस ठोस संस्कार की सीख दी जाती थी वह उनके जीवन की अमूल्य निधि होती थी। पारम्परिक पारिवारिक संरचनाओं के टूटने और एकल जीवन शैली के बढ़ने से व्यक्ति अधिक स्वतंत्र तो हुआ है, किन्तु वह अकेलेपन और मानसिक तनाव का शिकार भी बन गया है। सम्बन्धों में आत्मीयता के स्थान पर औपचारिकता और स्वार्थ ने स्थान ले लिया है। ऐसे परिवेश में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ चरित्र निर्माण और आदर्श की निर्मिति में अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध होती हैं।

अपनी बोधकथाओं के माध्यम से वे प्राचीन गुरुकुल की परम्परा को साकार करते हुए छात्रों को आदर्श जीवन-पद्धति और उन्हें संस्कारवान बनाने की दिशा में जो श्लाघनीय प्रयास कर रहे हैं वह युगांतकारी

है। इस सम्बन्ध में डॉ. ब्रजेन्द्र त्रिपाठी लिखते हैं, "बच्चे ही हमारे भावी नागरिक हैं, और हमारा भावी समाज कैसा होगा इन्हीं पर निर्भर है। वर्तमान समय में जिस तरह से जीवन मूल्य क्षरित हो रहे हैं, जिस तरह हमारे संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, जिस तरह से उपभोक्तावाद और बाजारवाद के कुचक्र में हम फँसते जा रहे हैं, उसकी काट यही है कि बचपन से ही छात्रों में नैतिकता के संस्कार डाले जाएँ, उन्हें एक सार्थक जीवन-दृष्टि दी जाए, उन्हें संस्कारवान और एक संवेदनशील मनुष्य बनाया जाए, उनके सहज विवेक को जागृत किया जाए, और यह कार्य शिव नारायण सिंह बड़ी सफलता और ईमानदारी से अपनी कथाओं के माध्यम से कर रहे हैं। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार पंडित विष्णु शर्मा ने 'पंचतंत्र' की कथाओं के माध्यम से किया था। यह शिक्षा के क्षेत्र में एक अभिनव प्रयोग है। बच्चों को नित्य एक नयी कथा सुनाकर उन्हें भावी जीवन के लिए तैयार करने का काम बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य है।"6

तकनीकी विकास ने जहाँ संचार को सरल और त्वरित बनाया है वहीं इसने मानवीय सम्बन्धों को सतही भी बना दिया है। आभासी जुड़ाव ने वास्तविक सम्बन्धों को कमजोर किया है, जिससे व्यक्ति सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़ता जा रहा है। यह स्थिति ' निकटता में दूरी' की परिचायक है। शिव नारायण सिंह देश- देशान्तर के महापुरुषों से जीवन, धर्म, दर्शन और समाज आदि के दृष्टान्त के माध्यम से अपनी लघु कथाओं को गढ़ते हैं और अपने विद्यार्थियों को जीवन दर्शन के उन्हीं मूल्यों तक पहुँचाने का सत्प्रयास करते दिखाई देते हैं।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में सम्बन्ध में 'मूल्यों के निर्माण कलश' में अष्टभुजा शुक्ल, अपना मत व्यक्त करते हैं कि– "विद्यार्थियों से...' ग्रंथ श्रृंखला के संकलन प्रायः प्रतिदिन निकलने वाले ऐसे नियमित और मिशनरी (उद्देश्यपरक) विचारों के प्रतिफलन हैं, जिनमें न उपदेशों की कोरी वाग्मिता है, न ज्ञान की गरिष्ठ पेचीदगियाँ, न कक्षाओं के बोझिल पाठ्यक्रम, न सीख देने का अत्यधिक दबाव। इन सबसे अलग इनमें कक्षा में प्रविष्ट होने के पूर्व छात्रों का अत्यन्त सहज और सुबोध ढंग से किया गया मानसिक उपचार है। कर्त्तव्य का नैतिक बोध है और नए खून की नई मेधा के साथ विकसित करने की वैचारिक- प्रक्रिया। यह सबकुछ इतना अनायास, स्पष्ट और गतिमान है, जो युवा पीढ़ी के जीवन की आगामी दिशा को सर्वतोभद्र बनानेवाली है। इसकी प्रेरणाओं के मूल्यों से निकली हुई इस शाला की पीढ़ी के लिए भविष्य में विचलन के खतरे न के बराबर होंगे। ऐसी आशा करना बहुत स्वाभाविक है।"7

राजनीतिक और सांस्कृतिक विरोधाभास– समकालीन समाज में राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी विरोधाभास मौजूद हैं। आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में वैश्वीकरण और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के इस युग में जहाँ एक ओर स्वतंत्रता, समानता और बहुलता के आदर्श स्थापित किए जाते हैं, वहीं दूसरी ओर व्यवहार में इन आदर्शों का क्षरण भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है सबसे प्रमुख राजनीतिक विरोधाभास सत्ता के केन्द्रीकरण और जनसत्ता सिद्धान्त के बीच दिखाई देता है। लोकतंत्र में सत्ता जनता होनी चाहिए किन्तु वास्तविकता यह है कि सत्ता कुछ विशेष वर्गों, राजनीतिक दलों या प्रभावशाली व्यक्तियों तक सीमित है। राजनीति को आज सेवा के बजाय स्वार्थ और सत्ता प्राप्ति का साधन बना लिया गया है। सरकारों द्वारा विकास के किए गए बड़े-बड़े दावे आम जनता की आवश्यकताओं और हितों के अनुरूप नहीं होता है।

समकालीन समाज में सांस्कृतिक स्तर पर भी अनेक विरोधाभास देखने को मिलते हैं। परम्परा समाज की सांस्कृतिक पहचान मूल्यों और विश्वासों का आधार होती है, जबकि आधुनिकता परिवर्तन का, मानव आचार और स्वतंत्रता का प्रतिनिधित्व करती है। समकालीन समाज इन दोनों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास करता है, किन्तु यह सन्तुलन प्रायः ही अस्थिर रहता है। एक तरफ तो लोग आधुनिक जीवन शैली को अपनाना चाहते हैं, वहीं दूसरी ओर अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहने की इच्छा भी रखते हैं। इस द्वंद्व के कारण सांस्कृतिक अस्मिता का संकट उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक उपभोग और सांस्कृतिक संवेदनशीलता के बीच भी विरोधाभास है। आधुनिक समाज में संस्कृति को एक वस्तु के रूप में उपभोग किया जाने लगा है, जैसे मनोरंजन, फैशन और मीडिया के माध्यम से। इससे संस्कृति की गहराई और उसके मूल मूल्य कमजोर होते जा रहे हैं।

यद्यपि समकालीन समाज में इन विरोधाभासों

को पूरी तरह समाप्त करना सम्भव नहीं है, क्योंकि ये समाज के विकास और परिवर्तन की स्वाभाविक प्रक्रिया का हिस्सा हैं, परन्तु इन्हें सन्तुलित और नियंत्रित किया जा सकता है। शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से यही करने का प्रयास कर रहे हैं। उनकी कथाएँ इन विरोधाभासों को सीधे-सीधे नहीं बल्कि प्रतीकात्मक और व्यंग्यात्मक रूप में उजागर करती हैं। उनकी कथाओं में 'राजा', 'मंत्री', 'दरबार', 'व्यवस्था' जैसे प्रतीक केवल परम्परागत सत्ता संरचनाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करते, अपितु आधुनिक राजनीतिक तंत्र की विसंगतियों को भी सामने लाते हैं। उनकी कथाओं की विशेषता है कि वे श्रोता या श्रोता एवं पाठक को किसी विचारधारा विशेष की ओर निर्देशित करने के बजाय उसे सोचने के लिए प्रेरित करती हैं। उनकी कथाएँ न तो अन्धपरम्परावाद का समर्थन करती हैं और न ही अन्धाधुन्ध आधुनिकता को स्वीकार करती हैं, बल्कि दोनों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं।

बोधकथा परम्परा का स्वरूप और विकास – ऐसा माना जाता है कि कथा कहने की कला और परम्परा दुनिया को भारत से प्राप्त हुई है। भारत में कथा की परम्परा गुणाढ्य की रचना 'बृहत्कथा' से आरम्भ होकर 'कथासरित्सागर' से होते हुए 'पंचतंत्र', 'हितोपदेश' और जातक कथाओं के रूप में विकसित हुई है। संस्कृत साहित्य में और बाद में लोकभाषाओं में रचित कथाएँ बोधकथाएँ ही हैं। प्राचीन बोधकथा परम्परा का सर्वाधिक लोकप्रिय और व्यापक रूप 'पंचतंत्र' में देखने को मिलता है। विष्णु शर्मा द्वारा रचित 'पंचतंत्र' में राजा अमरशक्ति के मूर्ख पुत्रों को राजनीति और व्यावहारिक ज्ञान सिखाने का वृत्तांत है। यह पाँच तंत्रों में विभक्त है– मित्रभेद, मित्रसंप्राप्ति, काकोलूकीयम्, लब्धप्रणाश और अपरीक्षितकारक। इसमें पशु-पक्षियों के माध्यम से कूटनीति, अर्थशास्त्र और जीवन-दर्शन की जटिलताओं को सुलझाया गया है। शिव नारायण सिंह की कथाओं में भी पशु-पक्षियों का प्रयोग इसी परम्परा का आधुनिक विस्तार है।

नारायण पंडित द्वारा रचित 'हितोपदेश' काफी हद तक 'पंचतंत्र' पर ही आधारित है, किन्तु इसमें कुछ नई कहानियाँ और सुभाषित नैतिक सूक्तियाँ जोड़ी गई हैं। इसमें चार खंड हैं– मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह और सन्धि। इसकी भाषा सरल है और यह विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से लाभप्रद है। शिव नारायण सिंह की 'विद्यार्थियों से...' की जड़ें कहीं-न-कहीं 'हितोपदेश' की सरल शिक्षण-पद्धति में देखी जा सकती हैं।

जातक कथाएँ बुद्ध के पूर्व जन्मों की कथाएँ हैं। इनका मूलाधार पूर्वजन्म और बौद्ध सत्य का त्याग है। ये कथाएँ सिखाती हैं कि एक व्यक्ति कैसे धीरे-धीरे नैतिक श्रेष्ठता को प्राप्त करता है। जातक कथाओं में समाज के निचले तबके, किसान और व्यापारियों का यथार्थ चित्रण मिलता है। इन कथाओं के पशु भी नैतिक निर्णय लेते हैं और मानवीय गुणों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जातक कथाओं में करुणा और दया को सर्वोपरि रखा गया है। 'जातक' में उल्लेख आता है कि "करुणा वह धर्म है जो मनुष्य को मनुष्य बनाता है। बिना करुणा के नीति निरर्थक है।"9

यह उद्धरण जातक कथाओं की करुणामूलक चेतना को रेखांकित करता है, जो शिव नारायण सिंह की कथाओं में मानवीय संवेदना के रूप में पुनः प्रकट होती है। उनकी कथाओं में भी आम आदमी और उसकी विडंबनाएँ जातक कथाओं की तरह ही जीवन्त हैं।

'कथासरित्सागर' संस्कृत साहित्य का विशाल कथा-कोष है, जिसकी रचना काव्यात्मक शैली में की गई है और जिसमें तिलिस्म, रोमांच और बोध का अद्भुत मिश्रण है। इसकी प्रमुख विशेषता इसका नीतिपरक स्वरूप है। इसकी अधिकांश कथाएँ किसी न किसी नैतिक शिक्षा या जीवन-संदेश के साथ समाप्त होती हैं। इन कथाओं के माध्यम से सत्य, ईमानदारी, धैर्य, परोपकार, मित्रता, कर्त्तव्यपालन जैसे मूल्यों का महत्त्व बताया गया है। यहाँ पर वर्णित है कि- "जीवन की कथा सरल नहीं है, वह अनुभवों की जटिल शृंखला है।"10

आधुनिक समाज में जहाँ लोकतंत्र, समानता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे मूल्य प्रमुख हैं, वहाँ इन कथाओं का सीधा अनुकरण सम्भव नहीं है और यहीं से पुनर्व्याख्या की आवश्यकता जन्म लेती है। प्राचीन बोधकथाओं के मूल मूल्यों को यथावत रखते हुए उन्हें नए सन्दर्भों में ढालना समकालीन रचनाकारों के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, जिसे शिव नारायण सिंह ने स्वीकार किया और निरंतर उद्यमरत हैं।

तुलनात्मक विवेचन– तुलनात्मक दृष्टि से विश्लेषण

करने पर स्पष्ट होता है कि प्राचीन परम्परा में जहाँ राजा और प्रजा को नीति सिखाने के लिए कथाएँ लिखी गईं, वहीं शिव नारायण सिंह ने आज के लोकतांत्रिक समाज और भ्रमित विद्यार्थियों को अपनी मानवीय सत्ता की पहचान कराने के लिए बोधकथाओं का सहारा लिया है।

प्राचीन बोधकथा परम्परा बनाम शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ : तुलनात्मक विवरण –

- आधार– प्राचीन परम्परा(पंचतंत्र, जातक आदि) / शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ
- मुख्य उद्देश्य– राजपुत्रों को नीति कूटनीति और व्यवहार सिखाना / आमजनमानस और विशेषकर विद्यार्थियों में 'मानवीय विवेक' जाग्रत करना
- पात्र संचय– पशु, पक्षी, राजा, व्यापारी और दैवीय शक्तियाँ / पशु- पक्षी, विद्यार्थी, मध्यमवर्गीय और आधुनिक जीवन की विसंगतियाँ
- निष्कर्ष शैली– अंत में स्पष्ट नैतिक शिक्षा प्रदान करना / निष्कर्ष श्रोता और पाठक के विवेक पर छोड़ दिया जाना
- संकट का स्वरूप– बाह्य संकट (युद्ध, शत्रु, अकाल, व्यापारादि) / आंतरिक और मनोवैज्ञानिक संकट (अवसाद, तकनीक का मोह, पहचान का संकट)
- भाषा-शैली– संस्कृत/पाली की सुभाषित युक्त अलंकृत शैली / समकालीन मुहावरेदार, सरल हिन्दी और व्यंग्यात्मक, पुष्ट एवं पुनर्व्याख्यात्मक विश्लेषण

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का आलोचनात्मक विवेचन —

वैचारिक धरातल : परम्परा और आधुनिकता का संश्लेषण– आलोचनात्मक दृष्टि से देखने पर स्पष्ट होता है कि शिव नारायण सिंह की कथाएँ 'पंचतंत्र' और जातक की करुणा का आधुनिक संस्करण हैं। जहाँ प्राचीन कथाओं में नैतिकता अक्सर पारलौकिक या राजाओं के अनुशासन से जुड़ी होती थी, वहीं शिव नारायण सिंह की कथाओं में नैतिकता लोकतांत्रिक नागरिक के विवेक से जुड़ी है। उनका वैचारिक धरातल गाँधीवादी नैतिकता और आधुनिक समाजशास्त्रीय यथार्थ का मिश्रण है। वे समाज को उपदेश नहीं देते, अपितु श्रोता या श्रोता एवं पाठक के भीतर सोए हुए उस मनुष्य को झकझोरते हैं जो बाजारवाद की चकाचौंध में अन्धा हो गया है।

समकालीन विडंबनाओं की पहचान – शिव नारायण सिंह की कथाओं का सबसे प्रबल पक्ष समकालीन विडंबनाओं की पहचान है। आलोचनात्मक दृष्टि से उनकी कथाएँ तीन प्रमुख विडंबनाओं पर सीधा आघात करती हैं।

बाजारवादी वस्तुकरण – उनकी कथाओं में स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित होता है कि आज इंसान किस तरह एक 'इकाई' या 'उत्पाद' के रूप में परिवर्तित हो गया है। 'मानवीय सत्ता' जैसी कथाएँ इस बात की प्रमाण हैं कि जब तकनीक और बाजार का वर्चस्व बढ़ता है तो सबसे पहले संवेदनाएँ मरती हैं। श्री सिंह की यह कथा रेखांकित करती है कि विद्यार्थी केवल सूचनाओं का संग्रहकर्ता न बने, बल्कि अपनी मानवीय सत्ता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों को पहचाने। वह जड़ पदार्थ की भाँति परिस्थितियों के वशीभूत न होकर अपनी आंतरिक शक्तियों को जागृत करें।

'विद्यार्थियों से' खंड-चार की 'दुर्गुणी पौधा' बोधकथा के अंतर्गत सुगंधित फूलों के पौधों के बीच एक पौधा ऐसा उग आता है, जिसमें फूल के आते ही बगीचे में चारों तरफ दुर्गंध फैल जाती है। यहाँ पर बोधकथा आज के हिंसात्मक परिवेश को दर्शाती है। "बगीचा शरीर है, माली जान है, सुगंध और दुर्गंध विचार हैं। मानव परिस्थितियों का दास होता है। परिस्थितिवश उसके मन में अच्छे-बुरे दोनों विचार उठते हैं। अच्छे विचार आते हैं तो उसका परिणाम सकारात्मक निकलेगा। बुरे विचार, जैसे हिंसा, भ्रष्टाचार, आतंक, लोभ, जिससे पूरा विश्व त्रस्त है। इसलिए गंदे विचार मन में आते ही उसे उखाड़ फेंकिए।"11

पाखण्ड का उद्घाटन– समकालीन समाज की यह बड़ी विडंबना है– दोहरा चरित्र। शिव नारायण सिंह की कथाएँ 'कथनी' और 'करनी' में पाखंड करने वालों के चरित्र को बड़ी सूक्ष्मता से बेनकाब करती हैं। उनका मानना है कि व्यवहार और कार्य-व्यापार में एकरूपता अत्यन्त आवश्यक है। यदि आप आदर्शों की बात करते हैं, परिश्रम की बात करते हैं, लेकिन उसे आचरण में नहीं लाते हैं तो जीवन को कष्टमय होने

से रोक नहीं सकते। 'विद्यार्थियों से...' खण्ड-दो में 'श्रमशील' शीर्षक कथा में तितली और मधुमक्खी की कथा के माध्यम से वे कहते हैं कि- ''जो मधुमक्खी की तरह श्रमशील हैं, जिन्हें अपने भविष्य की चिन्ता है, या यूँ कहिए जो कुछ कर गुजरना चाहते हैं, उनका परिणाम बेहतर होता है। और जो तितली-सा जीवन यापन करते हैं, उन्हें बस उसी क्षण की चिन्ता है, या यूँ कहिए कि बिना कुछ किए ही 'मधु का तालाब' पाना चाहते हैं, तो उन्हें मधु का तालाब कहाँ मिलेगा ?"12

शार्टकट संस्कृति और तात्कालिकता का संकट– आज का समाज तत्क्षणता के युग में जी रहा है। विद्यार्थियों के भीतर यह विडंबना घर कर गई है कि सफलता एक 'उत्पाद' है जिसे बाजार से खरीदा जा सकता है। शिव नारायण सिंह 'काँटे और फूल' के माध्यम से यह स्थापना देते हैं कि फूल — सफलता की सत्ता – काँटों अर्थात् संघर्ष की उपस्थिति के बिना अर्थहीन है। जिस प्रकार काँटे फूल की सुरक्षा करते हैं, उसी प्रकार जीवन की कठिनाइयाँ मनुष्य के चरित्र को गढ़ती हैं। इस कथा का द्वंद्वात्मक यथार्थ यह है कि हम काँटों से बचना चाहते हैं, पर गुलाब की खुशबू का आनन्द लेना चाहते हैं।

इसी प्रकार 'सुख की अनुभूति' कहानी का विश्लेषण करते समय रामनरेश कुशवाहा लिखते हैं — "'सुख की अनुभूति' कहानी सीधे तौर पर स्पष्ट करती है कि बिना दुख की अनुभूति के सुख की अनुभूति नहीं होती। बिना खोए, पाने का आनन्द नहीं मिलता। यह कथा इस सिद्धान्त पर आधारित है कि बिना विरोधी के अस्तित्व के, किसी का कोई महत्त्व नहीं है। अंधेरा न हो तो प्रकाश का महत्त्व नहीं है, और मूर्ख न हों तो विद्वान का अस्तित्व नहीं है। उसी तरह दुख नहीं तो सुख का कोई अस्तित्व नहीं है।"13

इसी प्रकार 'स्वप्न और यथार्थ' बोधकथा विद्यार्थियों को यह बोध कराती है कि स्वप्न लक्ष्य की प्रेरणा हो सकते हैं, लेकिन जीवन तो यथार्थ के धरातल पर ही जिया जाता है। यह कथा बाजारवाद के इस दोहरेपन पर चोट करती है जहाँ व्यवस्था विद्यार्थियों को केवल एक 'उपभोक्ता' बनाकर रखना चाहती है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का शिल्प और भाषाई वैशिष्ट्य– शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ 'गागर में सागर' भरने की कला का जीवन्त उदाहरण हैं। जहाँ समकालीन साहित्य अक्सर जटिल शिल्प के जाल में फँसकर अपनी संप्रेषणीयता कुछ हद तक खो देता है, वहीं शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ अपनी सरलता से सीधे हृदय को स्पर्श करती हैं। इन बोधकथाओं का सबसे बड़ा शिल्प उनकी लघुता है। शिव नारायण सिंह इस तथ्य से भलीभाँति परिचित हैं कि इस भागमभाग के युग में श्रोता एवं पाठक के पास लंबे दर्शन सुनने या पढ़ने का धैर्य नहीं है। उनकी कथाओं का शिल्प सूत्र-शैली पर आधारित है। वे कथा का आरंभ सीधे समस्या से करते हैं और अंत एक ऐसे बोध पर होता है, जो श्रोता या श्रोता एवं पाठक को देर तक सोचने पर विवश कर देता है।

शिल्प के स्तर पर उन्होंने व्यंग्य को एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया है। जब वे 'स्वप्न और यथार्थ' की बात करते हैं तो उनकी भाषा थोड़ी तीक्ष्ण हो जाती है, जो आधुनिक समाज के दिखावे और पाखंड की परतों को बड़ी बेरहमी से उखाड़ती है। उनके व्यंग्य में कटुता नहीं, बल्कि एक प्रकार की करुणापूर्ण चेतावनी होती है। वे अपनी कथाओं में साधारण वस्तुओं या स्थितियों को गहरे प्रतीकों में बदलने की क्षमता रखते हैं।

सामाजिक और नैतिक दृष्टि से शिव नारायण सिंह का योगदान – शिव नारायण सिंह का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान पारम्परिक बोधकथा विधा को नैतिक उपदेश के साथ-साथ उसे सामाजिक यथार्थ, आलोचना और चेतना के स्तर पर पुनर्व्याख्यायित करना है। उन्होंने यह स्थापित किया है कि नैतिकता किसी गुफा या मंदिर का विषय नहीं, बल्कि विद्यार्थी के बस्ते, बाजार के व्यवहार और मानवीय सम्बन्धों की पवित्रता में निहित है। उनकी कथाएँ नैतिकता के लोकतंत्रीकरण का कार्य करती हैं, जहाँ हर साधारण इंसान भी अपने भीतर के सत्य को पहचानने की शक्ति और सामर्थ्य पाता है।

आज का समाज घोर व्यक्तिवाद से ग्रस्त है। 'मैं' और 'मेरा' के घनचक्कर में उलझकर वह अपना अस्तित्व खोता जा रहा है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ व्यक्ति को उसके अहंकार के सीमित दायरे से निकालकर सामाजिक उत्तरदायित्व की ओर उन्मुख करती हैं। व्यंग्य के माध्यम से वे समाज के पाखण्ड, दिखावे और द्वंद्व को उजागर करते हैं, जिससे श्रोता-पाठक को अपनी सोच और व्यवहार पर

पुनर्विचार करने की प्रेरणा मिलती है। 'विद्यार्थियों से...' की कथाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि वे युवाओं को केवल करियर के लिए नहीं, बल्कि जीवन के लिए तैयार करते हैं। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को सिखाया कि सार्थक सफलता व्यक्ति को ऊपर उठा सकती है, लेकिन चरित्र ही उसे टिकने की शक्ति देता है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि समकालीन साहित्य में शिव नारायण सिंह का योगदान उनकी बोधकथाओं के माध्यम से महत्त्वपूर्ण रूप से स्थापित होता है। उन्होंने इस परम्परागत विधा को आधुनिक संदर्भों से जोड़कर उसे एक नई वैचारिक ऊँचाई प्रदान की है। उनकी रचनाओं की प्रमुख विशेषता उनकी प्रतीकात्मकता, व्यंग्यात्मकता और बहुस्तरीय अर्थसंरचना है। वे सरल कथानकों के माध्यम से जटिल सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रश्नों को सामने लाते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त प्रतीक और रूपक आधुनिक समाज की वास्तविकताओं को उजागर करते हैं, जिससे श्रोता एवं पाठक को गहन चिंतन के लिए प्रेरणा मिलती है।

इसके अतिरिक्त, उनकी बोधकथाएँ पुनर्व्याख्या की व्यापक सम्भावनाएँ प्रस्तुत करती हैं। वे समाज में व्याप्त विसंगतियों को उजागर करने के साथ-साथ नैतिक चेतना और आत्मविश्लेषण की भावना को प्रोत्साहित करती हैं। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट संकेत देती हैं कि वास्तविक विकास केवल भौतिक नहीं, बल्कि मानवीय और नैतिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। अंततः, समकालीन समाज की जटिलताओं और विडंबनाओं को समझने के लिए शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ एक सशक्त और प्रभावी माध्यम हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 232
2. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या –17 – 18
3. 'मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 42 – 45
4. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ. नामवर सिंह, लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृष्ठ संख्या – 85,
5. भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका, डॉ. नगेंद्र, ओरियंटल बुक डिपो दिल्ली, संस्करण 1995, पृष्ठ संख्या – 56
6. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 59
7. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 68
8. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 16
9. जातक कथा, मंगलानंद, अनु. राहुल सांकृत्यायन, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या –87
10. कथा सरित्सागर, तरंग-5, पं. दुर्गाप्रसाद द्विवेदी, गीताप्रेस गोरखपुर, पृष्ठ संख्या – 211
11. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 55
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 04
13. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 24 – 25